RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-02
February -2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन के संदर्भ में भारतीय विदेश नीति का बदलता स्वरूप

Dr. Laxmi Narayan

Assistant Professor (Political Science), Govt. College, Malsisar, Jhunjhunu, Rajathan

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 16 Feb 2020

Keywords
दक्षिण एशिया, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, सार्क, पारगमन सन्धि।

ABSTRACT

दक्षिण एशिया में भारत को एक प्रधान शक्ति के रूप में देखा जाता है, जिसमें आधिपत्य अथवा नेतृत्व की भावना निहित है। अमेरिकी विद्वानों की दृष्टि में "प्राधान्य" अथवा "आधिपत्य" को इस रूप में परिभाषित किया गया है– किसी देश अथवा देशों के समूह का ऐसा नेतृत्व जो विशेष भूमिका अदा करता है, विशेष सुविधाओं को प्राप्त करता है, तथा राजनीतिक अथवा आर्थिक क्षेत्र की पद्धतियों की सफलता के लिए विशेष उत्तरदायित्व का निर्वाह करता है। कुछ विचारकों के अनुसार–"प्रधान शक्ति अपनी स्वीकृत नीतियों में परिवर्तन कर सकती है। इन दों परिभाषाओं का विश्लेषण करके देखा जाये तो भारत कठिनाई से ही इस परिभाषा में आ सकता है, क्योंकि भारत दक्षिण एशिया में न तो विशेष भूमिका ही निभाता है, न विशेष सुविधाओं का ही लाभ उठाता है और न कोई क्षेत्रीय राजनीति अथवा आर्थिक पद्धति के संचालन में कोई विशेष उत्तरदायित्व ही निभाता है। फिर भी यदि "सार्क" देशों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो आकार, जनसंख्या, तकनीकी विकास, आर्थिक विकास तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में निश्चय ही भारत बड़ी भूमिका निभाने वाला बड़ा देश माना जाता है।

शोध विस्तार– भारत के पश्चात् पाकिस्तान का स्थान आता है, जो प्रभाव की दृष्टि से दूसरे नम्बर पर कहा जा सकता है। राजनीतिक क्षेत्रों में ऐसा माना जाता है कि यदि इन देशों के सम्बन्ध सुधर जायें तो 'सार्क' के भाग्य का निर्धारण आसानी से किया जा सकता है। भारत के विरूद्ध सभी 'सार्क' देशों में प्रारम्भ से ही जो उसके नेतृत्व अथवा आधिपत्य के प्रति शंका की भावना बन चुकी थी, उसे निराधार ही कहा जायेगा, क्योंकि न तो भारत सभी सदस्य राज्यों के लिए खतरनाक बन सकता है और न सभी सदस्य राज्य मिलकर भारत के विरूद्ध एक हो सकेंगे। स्पष्ट है कि चाहे–अनचाहे इस क्षेत्र में भारत का महत्व स्वीकार किया जाता है। जब कभी भारत और पाकिस्तान के बीच समस्यायें सामने आई हैं तो क्षेत्र को नरमपंथी शक्तियों नेपाल, भूटान, श्रीलंका तथा मालदीव ने उन्हें सुधारने हेतु अपना प्रभाव डाला है। छोटे राज्यों में अधिक सहयोग की सम्भावना इसलिए देखी जा सकती है कि वे पड़ोसी बड़े, औद्योगिक देशों पर निर्भर करते है, जिससे उनकी अर्थव्यवस्था विकसित नहीं हो पाती। भारत अपने प्राकृतिक साधनों, खनिज सम्पत्ति, जनशक्ति, तकनीकी ज्ञान, व्यापार आदि में क्षेत्रीय महत्व रखता है। भारत अपनी इस शक्ति का लाभ पड़ोसी देशों को पहुंचा सकता है।[1]

क्षेत्र की आर्थिक दशा सुधारने के लिए यह आवश्यक है कि आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन का बटवारा कर दिया जाय, अर्थात् जिस वस्तु का उत्पादन एक राज्य में होता है, उसका उत्पादन दूसरे राज्य में न किया जाये। इस नीति से क्षेत्र में आर्थिक विकास एवं व्यापार की स्थिति को आसानी से सुधारा जा सकता है, तथा बांगलादेश में कृषि सुविधाओं को देकर अच्छी उपज बढ़ाई जा सकती है। भारत एशिया का केन्द्रीभूत एक आकर्षक बिन्दु है, जिसके मार्गदर्शन में सार्क अच्छी सफलता प्राप्त कर सकता है। उसे छोटे राज्यों के हित में अपनी भूमिका को अधिक सहयोगात्मक एवं विस्तृत बनाना चाहिए, जिससे कि वे उसे आसानी से स्वीकार करें। भारत के लिए यह एक दुविधा की स्थिति हो जाती है कि वह क्षेत्र में प्रभावशाली ढंग से अपना सहयोग प्रदान करें तो अन्य सदस्य राज्य उसे "प्राधान्य स्थापित करने वाला" देश मानने लगेंगे, जो भारत के हित में उचित नहीं होगा। दूसरी ओर भारत छोटे राज्यों के पीछे रहकर भी नहीं चल सकता, उसे अपना विकास करके अपनी शक्ति बढ़ानी ही होगी। अतः यह कहा जा सकता है कि भारत को कूटनीतिक पद्धति अपना कर क्षेत्र में मध्यम स्तर की नीति का प्रयोग करना अधिक उपयोगी होगा, क्योंकि यदि भारत तेजी से विकास करता है तो छोटे देश उसकी कोई चाल समझ सकते हैं, यदि भारत शान्ति से बैठता है तो उसे अतिराष्ट्रीयतावादी कहा जायेगा, तथा यदि तटस्थ रहता है तो क्षेत्रीय सहयोग से विकास सम्भव नहीं होगा। इन समस्याओं में सन्तुलन बनाये रखने के लिए भारत को उत्साह और स्थिरता के बीच तथा इच्छा और व्यवहारिकता के बीच अपना सहयोग स्थापित करना चाहिए।[2]

यह कहा जा सकता है कि भारत के लिए मध्यम मार्ग उचित नहीं है। उसे वास्वत में गतिशील भूमिका निभाना चाहिए, जो देने वाले की भूमिका में हो, न कि लेने वाले की भूमिका में। इसे इस प्रकार समझा जा सकता है:– सन् 1979 में स्थापित जनता दल के शासन में भारत द्वारा अपने पड़ोसियों के साथ सम्बन्ध सुधारे गये, वैदेशिक नीति में

RRIJM 2015, All Rights Reserved

आंशिक परिवर्तन किया गया अर्थात् अपनी नीति में समायोजन एवं सामंजस्य स्थापित किया गया। नेपाल के साथ व्यापार एवं पारगमन सन्धि हुई, जिससे भारत के प्रति नेपाल में अनुकूल प्रतिक्रिया देखने को मिली। फरक्का बाँध समझौते से बांग्लादेश सन्तुष्ट हुआ। इसी प्रकार शान्ति समझौते के माध्यम से श्रीलंका के सम्बन्धों में भी सुधार आया। अतः सामंजस्य की नीति में न तो निर्बल राज्यों का शोषण होता है, और न बड़े राज्यों में छोटों पर आधिपत्य जमाने की भावना होती है। अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों में ऐसा ही व्यवहार सहयोग को बढ़ाता है, और पारस्परिक अविश्वास के स्थान पर विश्वास, भय के स्थान पर निर्भयता तथा शंका के स्थान पर खुलापन को लाता है।

"दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन" में कुछ ऐसी समस्यायें हैं, जिन्हें सार्क के संविधान से अलग रखा गया है। इन समस्याओं में द्विपक्षीय मामले तथा झगड़ालू मामले आते हैं, जिन्हें मंच पर नहीं उठाया जा सकता और भारत, सार्क चार्टर में किसी ऐसे संशोधन के पक्ष में भी नहीं है, जिसके द्वारा इन समस्याओं को मंच पर उठाया जा सके। भारत में ऐसे मामलों को पारस्परिक वार्तालाप, मैत्रीपूर्ण व्यवहार एवं सहयोग द्वारा सुधारना चाहता है। यह भी सत्य है कि आस–पड़ोस के सम्बन्ध समस्या रहित नहीं हो सकते, फिर भी व्यक्तिगत समस्याओं की अपेक्षा क्षेत्र से सम्बन्धित समान समस्यायें अधिक महत्वपूर्ण हैं, जिन्हें मिल–जुल कर सुधारना चाहिए। द्विपक्षीय मामले भी इसी कोटि में आते हैं, जो मिलजुलकर किये गये समझौते से हल किये जा सकते हैं, और क्षेत्रीय एकता को बढ़ा सकते हैं। बंगलौर शिखर सम्मेलन में ऐसी समस्याओं को "समान स्थिति" के रूप में मानने पर बल दिया गया था, जिन्हें मिलजुल कर हल करने की बात की गई थी। आतंकवाद और नशीली चीजों के विरूद्ध की गई संस्तुतियों को स्वीकार करने के प्रस्ताव के समय द्विपक्षीय मामलों को भी सार्क के अधीन लाये जाने की प्रबल माँग की गई, जिसमें श्रीलंका के विदेशमन्त्री द्वारा उसका विशेष अनुमोदन किया गया, और यह टिप्पणी की गई कि यदि हम ऐसा नहीं करते तो सार्क अन्धा, बहरा हो जायेगा।[3] अतः हमें इन समस्याओं के समाधान के लिए कोई रास्ता ढूँढना होगा और बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के हमें आपस में ही इनका समाधान करना होगा। बांग्लादेश के विदेशमन्त्री के अनुसार यह सब सार्क चार्टर के अनुकूल ही होना चाहिए। नेपाल के विदेशमन्त्री द्वारा भी सार्क सिद्धान्त का अनुमोदन किया गया, और समानता के सिद्धान्त पर द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय मामलों को हल करने का सुझाव दिया। किन्तु ऐसा माना जाता है कि द्विपक्षीय मामलों सार्क से अलग रखने से ही सार्क को अपने पैर जमाने में आसानी हुई। किन्तु कुछ लोगों द्वारा इसका विरोध किया गया, और यह विचार किया गया कि सार्क से इस तरह की समस्याओं को कब तक अलग रखा जा सकेगा। वास्तविकता यह है कि द्विपक्षीय एवं झगड़ालू मामले सुलझ जाने से क्षेत्रीय सहयोग अधिक घनिष्ठ हो सकेगा। यह एक सुनिश्चित सिद्धान्त है कि अराजनीतिक क्षेत्रों का निपटारा राजनीतिक सम्बन्धों पर ही आधारित होता है। अतः यदि क्षेत्रीय मानसिकता को अलग–अलग रखने के बजाय एक साथ मिलकर खुले रूप में विचार के दायरे में लाया जाये तो सार्क मंच को प्रभावकारी बनाया जा सकता है। आगे बढ़ने के लिए यह आवश्यक है कि पहले राजनीतिक संघर्षों को निपटा लिया जाये।

इस विषय पर बंगलौर शिखर सम्मेलन के बाद लोक सभा में विचार–विमर्श हुआ, जिसमें विदेश मन्त्री श्री नारायण दत्त तिवारी ने सदस्यों को उस वक्तव्य के सम्बन्ध में स्मरण दिलाया, जो बंगलौर शिखर सम्मेलन के पश्चात् प्रधानमन्त्री राजीव गांधी ने दिया था। विदेश मन्त्री ने सार्क देशों के विदेश सचिवों के साथ भी अलग से द्विपक्षीय मामलों पर विचार–विमर्श किया।[4]

पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री के साथ परिचर्चा में आण्विक अस्त्र कार्यक्रम, आंतकवादियों को सहायता और उन्हें हथियारों की सप्लाई जैसे गम्भीर मसलों पर बातचीत हुई। प्रधानमन्त्री राजीव गांधी तथा पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री के बीच बैठक में यह तय किया गया कि दोनों राष्ट्र अवैध सीमा उल्लंघन दवाओं का अवैध व्यापार, तस्करी तथा सीमा पर आतंक फैलाने सम्बन्धी गतिविधियों को रोकने के लिए सहयोग के उपायों का पता लगायेगे। इस विचार–विमर्श में भारत की तरफ से सामान्य वातावरण बनाने के प्रयास प्रतिबिम्बित होते है। प्रधानमंत्री ने श्रीलंका के राष्ट्रपति जे.आर. जयवर्धने से भी विस्तार से बातचीत की, और तय हुआ कि आतंकवाद से बिना कोई समझौता किये श्रीलंका की समस्या का हल होना चाहिए और यह श्रीलंका के संविधान के अन्तर्गत किया जाये। इस समस्या पर उपयोगी विचार श्रीलंका के विदेशमन्त्री ए.सी. एस. हमीद, भारतीय शिष्ट मण्डल के साथ भी चलता रहा। यह निर्णय लिया गया कि के. नटवर सिहं एवं पी. चिदम्बरम् कोलम्बों की यात्रा करेंगे, और श्री जयवर्धने से आगे की वार्ता के बाद श्रीलंका सरकार का प्रत्युत्तर प्राप्त करेंगे।[5]

प्रधानमन्त्री की बांग्लादेश के राष्ट्रपति के साथ वार्तालाप में देशों के बीच द्विपक्षीय सम्बन्धों के विकास पर दृष्टि डाली गई तथा तय हुआ कि भारत–बांग्लादेश की नदी जल–सम्बन्धी संयुक्त समिति को शासनादेश के साथ अगले छह माह तक के लिए अर्थात 21 मई 1987 तक बढ़ा दिया जाए, और निर्धारित अवधि में पूरा किया जाएगा। प्रधानमंत्री ने भूटान नरेश के साथ गर्मजोशी तथा मैत्रीपूर्ण विचार–विमर्श में द्विपक्षीय तथा पारम्परिक सम्बन्धों के अन्तर्राष्ट्रीय मामलों पर बातचीत की। नेपाल नरेश के साथ प्रधानमन्त्री की भेंट एक सौहार्दपूर्ण वातावरण में हुई तथा दोनों देशों के सम्बन्धों एवं पारस्परिक समझ को और अधिक निकट लाने पर विचार–विमर्श हुआ। मालदीव के राष्ट्रपति के साथ प्रधानमंत्री की भेंट से हमारे द्विपक्षीय सहयोग तथा सार्क मामलों पर दृष्टि

RRIJM 2015, All Rights Reserved

डालने का अवसर प्राप्त हुआ। इस प्रकार भूटान, नेपाल तथा मालदीव के राष्ट्राध्यक्षों के साथ हुई प्रधानमन्त्री की परिचर्चा ने पारस्परिक समझ के क्षेत्र को बढ़ाने तथा भारत एवं इन राष्ट्रों के बीच पारम्परिक एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को भविष्य में शक्तिशाली बनाने में सहायता प्रदान की।

सार्क के अन्तर्गत ज्वलन्त द्विपक्षीय समस्यायें रही है। श्रीलंका में तमिलों की समस्या, भारत और नेपाल के बीच व्यापार एवं पारगमन सन्धि की समस्या तथा मालदीव के विरूद्ध सत्ता परिवर्तन के लिए सैनिक षडयन्त्र की समस्या के उदाहरण इस प्रसंग में दिये जा सकते है, और यह सभी समस्यायें भारत के सहयोग तथा सहायता से निपटाई जा सकी। आवश्यकता यह थी कि सार्क को इन घटनाओं पर मौन न रहकर उन्हें अपने मंच पर लाना चाहिए था, जिससे ऐसी समस्याओं के समाधान में सदस्य राज्यों के बीच एक अनुकूल वातावरण का निर्माण होता। इतना ही नहीं नवम्बर 1987 के काठमाण्डू शिखर सम्मेलन में आंतकवादी गतिविधियों के सम्बन्ध में तथा उसके निवारण हेतु श्री राजीव गांधी ने मुख्यरूप से जोर दिया।

इस सम्बन्ध में लोकसभा में श्री सत्येन्द्र नारायण सिन्हा, श्री शरद दिघे तथा वर्धी चन्दर जैन के यह पूछे जाने पर कि, सार्क शिखर सम्मेलन में आतंकवाद को उखाड़ फेंकने से सम्बन्धित प्रस्ताव के कार्यान्वयन में क्या अनेक वैधानिक समस्यायें सम्मिलित है? यदि हाँ, तो उनका विवरण क्या है तथा सरकार उनमे शीघ्र ही कुछ परिवर्तन के सम्बन्ध में विचार कर रही है? प्रश्न का उत्तर देते हुए राज्यमन्त्री के. नटवर सिंह ने उत्तर देते हुए कहा कि "हमारे कानून में कुछ संशोधन जरूरी होगा, तथा सरकार इस सम्बन्ध में आवश्यक संशोधनों का मूल्यांकन कर रही है, और इस परिवर्तन पर आवश्यक जाँच के पश्चात् ही निर्णय लिया जा सकता है।[6]

इसके साथ ही लोक सभा में 'सार्क' देशों के लिए खाद्य भण्डारण के प्रस्ताव पर श्री प्रकाश वी. पाटिल ने प्रश्न किया कि क्या खाद्य एवं सिविल सप्लाई मन्त्री यह बतायें कि काठमाण्डू में शीघ्र ही सम्पन्न शिखर सम्मेलन में, सूखे तथा बाढ़ के समय सदस्य देशों के उपयोग हेतु खाद्य सामग्री के वितरण के सम्बन्ध में प्रस्ताव पर कोई विवादास्पद चर्चा हुई? यदि हाँ, तो क्या योजना रोक दी गई, तथा इसका वैधानिक रूप से कार्यान्वयन कब किया जायेगा, संसदीय एवं खाद्य तथा सिविल सप्लाई मन्त्री श्री एच. के. एल. भगत ने प्रश्न का उत्तर देते हुए बताया कि "सार्क खाद्य भण्डार सुरक्षा सम्बन्धी समझौते पर सार्क सदस्यों द्वारा काठमाण्डू की शीघ्र सम्पन्न शिखर सम्मेलन में 4 नवम्बर, 1987 को हस्ताक्षर किये गये। इस भण्डारण में खाद्यान्न प्रदान करने हेतु भारत ने 153,200 टन खाद्यान्न तथा नेपाल ने 3600 टन खाद्यान्न निर्धारित किया था। खाद्य भण्डारण तथा वितरण सम्बन्धी यह समझौता सार्क की मन्त्रिपरिषद (काउन्सिल ऑफ मिनिस्टर्स) द्वारा तय की गई तिथि से प्रभावी होगा।

इसके अतिरिक्त भारत–पाकिस्तान के मध्य दिसम्बर 1988 के इस्लामाबाद शिखर सम्मेलन में जिन महत्वपूर्ण विषयों पर समझौता हुआ, उससे सार्क में भारतीय भूमिका स्पष्ट दिखाई देती है। इस भूमिका का स्वरूप नवम्बर 1990 के माले शिखर सम्मेलन में और अधिक प्रभावशाली बनकर सामने आता है, जबकि उसने अपने दो महत्वपूर्ण प्रस्तावों द्वारा सातों राष्ट्रध्यक्षों का ध्यान आकर्षित किया, और उन्हें स्वीकृत करने में सहमति प्रदान की।[7]

उपर्युक्त भूमिका के अतिरिक्त यदि सामान्य रूप में भी देखा जाये तो दक्षिण एशिया क्षेत्र में भारत एक ऐसा सदस्य राष्ट्र है कि सार्क के शेष छः सदस्य राष्ट्र मिलकर भारत के एक तिहाई क्षेत्र के बराबर भी नहीं है। भारत केन्द्र में स्थित है। वह अपनी जनशक्ति, प्राकृतिक सम्पदा, सैनिक क्षमता, खनिज साधन, तकनीकी और औद्योगिक आधार आदि सभी क्षेत्रों में विशेष महत्व रखता है। अतः भारत द्वारा निर्मित किसी भी योजना को क्षेत्र के सदस्य राज्य– "क्यों, क्या, किसलिए" इत्यादि विचारों के माध्यम से अपनी आशंकाओं को स्वाभाविक रूप में व्यक्त करते हैं। यद्यपि सार्क में किसी भी निर्णय के लिए "एकमत का सिद्धान्त" सभी शंकाओं को दूर करने के लिए पर्याप्त है, फिर भी एक शक्तिमान देश होने के कारण भारत को क्षेत्रीय देशों को अपने विश्वास में लाने का प्रयास करना ही होगा। भारत का राजनीतिक पक्ष भारतीय सुरक्षा सिद्धान्त को अत्यन्त सुदृढ़ मानता है और दूसरे राज्य भी उसकी इस शक्ति को पहचानते हैं। इस स्थिति में समीक्षकों की धारणा है कि भारत एक श्रेष्ठ देश अवश्य बने किन्तु आक्रमणकारी नहीं।

के. सुब्रहमण्यम की दृष्टि में भारत को क्षेत्र की महानशक्ति के रूप में उभरना चाहिए, और क्षेत्रीय कार्यों में अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना चाहिए। जिससे कि विश्व की, अमेरिका, रूस, चीन तथा पश्चिमी यूरोप के शक्तिशाली देश दक्षिण एशिया से सम्बन्धित प्रश्नों पर भारत की अनदेखी न कर सकें। आर. के. हजारी के अनुसार आर्थिक तथा सैनिक शक्ति एक दूसरे के हितों की रक्षा करती है और उन्हें सुदृढ़ बनाती है। भारत को इस रूप में महान होना चाहिए। उनके अनुसार भारत को हिन्द महासागर में अपने जहाजी बेड़े को शक्तिशाली बनाना चाहिए और अपने विशाल सागरीय तट पर अपना प्रभुत्व स्थापित रखना चाहिए, जिससे कि कोई दूसरी शक्ति इस पर अपना आधिपत्य स्थापित न कर सके। ए. एस. अब्राहम के अनुसार भारत ही इस क्षेत्र का महान देश रहा है, उनके अनुसार अमेरिका भी भारत के जहाजी बेड़े को शक्तिशाली मानता है, जबकि पाकिस्तान अमेरिका के सहारे अपनी बिगड़ी हुई अर्थव्यवस्था में सुधार तथा सैनिक सहायता के बल पर शक्तिशाली बनना चाहता है। किन्तु इन दोनों देशों

RRIJM 2015, All Rights Reserved

में मौलिक अन्तर यह है कि भारत अपने ही सहारे शक्तिशाली बन सकता है, जबकि पाकिस्तान दूसरे के सहारे शक्तिशाली बनने का झूठा अभिमान कर सकता है। अतः भारत को अपनी सैनिक प्रधानता बनाये रखना चाहिए। अमेरिका के सेक्रेटरी ऑफ स्टेट जार्ज शुल्ज ने दक्षिण एशिया के क्षेत्र में भारत की क्षेत्रीय शक्ति को न्यायसंगत माना है। एक तथ्य यह भी है कि खनिज सम्पदा या प्राकृतिक साधनों के अभाव में पाकिस्तान कभी भी शक्तिशाली नहीं बन सकता है। अतः भारत का यह दायित्व है कि 'सार्क' के माध्यम से सदस्य राज्यों को लाभ पहुंचाते हुए 'सार्क' को बनाये रखने में अपना योगदान दें।[8]

भारत को अपने हित की दृष्टि से भी 'सार्क' को सहयोग प्रदान करना चाहिए, आर्थिक लाभ के उद्देश्य से भारत अपना उत्पादित सामान क्षेत्र के सभी बाजारों में भेज सकता है, वह अपने तकनीकी ज्ञान और औद्योगिक ज्ञान से भी अन्य राज्यों को लाभान्वित कर सकता है। क्षेत्र में पूँजी निवेश की अनेक सम्भावनायें हैं। इस प्रकार 'सार्क' राष्ट्रों के निर्माण में सहायक हो सकता है। इससे जनता का जीवन स्तर ऊँचा उठेगा, पड़ोसी राज्यों में स्थायित्व बढ़ेगा, द्विपक्षीय मामलों में नरमी आयेगी आदि जो भारत के हित में होगा।

भारत की शक्ति तथा छोटे राज्यों के उस पर विश्वास से अनेक समस्याओं को निपटाया जा सकता है। भारत स्वयं इस क्षेत्र की एकता बनाये रखना चाहता है, किन्तु यह राजनीतिक एवं सुरक्षात्मक क्षेत्र से बाहर रहना चाहिए। भारत शिमला समझौते की भाँति एक स्वतन्त्र नीति का निर्माण भी कर सकता है, जिसमें दक्षिण एशिया के लिए दीर्घकालीन नीति का पालन हो सके। किन्तु यह नीति 'सार्क' से अलग होनी चाहिए। यह कार्य दो रूपों में किया जा सकता है। पहला यह कि, भारत एक शक्तिशाली देश की भूमिका के निर्वाह के लिए एक राजनीतिक सुरक्षात्मक नीति बनाये। दूसरा यह कि, प्रजातन्त्रीय सिद्धान्त के आधार पर आर्थिक एवं सांस्कृतिक योजनाओं का निर्माण करे, जो 'सार्क' के अधीन हो, जिससे वह सार्क देशों को अधिकाधिक लाभ कर सके। 'सार्क' के प्रति निष्ठा के सम्बन्ध में भारत की नीति उस समय स्पष्ट हो गई थी, जबकि उसने ई.ई.सी., आई.एम.एफ. तथा आई.टी.यू. द्वारा 'सार्क' को विदेशी आर्थिक सहायता मिलने के समय अपनी विपरीत प्रक्रिया प्रदर्शित की थी। भारत 'सार्क' के कार्यक्रमों से विदेशी ताकतों के हस्तक्षेप को दूर ही रखना चाहता था। उसकी दृष्टि में विदेशी ताकतों के हस्तक्षेप से 'सार्क' स्वतन्त्र रूप से दक्षिण एशिया क्षेत्र में आर्थिक सहयोग नहीं कर पाता। राजनीतिक अस्थायित्व बढ़ जाता, आतंकवाद को प्रोत्साहन मिलता तथा क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने में कठिनाई हो जाती। भारत क्षेत्रीय साधनों के द्वारा ही अपनी समस्याओं को सुलझाने और सहयोग के कार्यक्रमों को विकसित करने का पक्षधर रहा है, जिससे कि तेजी से आर्थिक विकास हो सके और सभी सदस्य राज्यों को उसका समान लाभ मिल सके।[9]

उदाहरण हेतु भारत के प्रधानमन्त्री राजीव गाँधी ने अप्रैल 1993 के ढाका शिखर सम्मेलन में आर्थिक विकास के लिए क्षेत्रीय सहयोग पर विशेष जोर दिया। उनका स्पष्ट कथन था कि भारत इस क्षेत्र का बड़ा देश होते हुए भी किसी पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने की इच्छा नहीं रखता। सार्क एक आर्थिक संगठन है और इसमें सभी सदस्य राज्यों को एक समान अधिकार प्राप्त है, क्योंकि कोई भी क्षेत्रीय प्रस्ताव सभी की सहमति से ही पारित हो सकता है। फिर भी भारत के विशेष सहयोग को नकारा नहीं जा सकता। उदाहरण के लिए भारत, बांग्लादेश, नेपाल, पाकिस्तान आदि सभी कृषि प्रधान देश हैं। कृषि के लिए पानी की विशेष आवश्यकता होती है। इस क्षेत्र में वर्षा मानसून पर आधारित होने के कारण कभी कम और कभी अधिक होती है, जिससे बाढ़ और अकाल की समस्या किसी न किसी क्षेत्र में प्रति वर्ष बनी रहती है। इस समस्या को दूर करने के लिए कोई भी छोटा देश समर्थ नहीं हो सकता। अतः यदि भारत, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान मिलकर हिमालय पर्वत से प्राप्त वर्षा का पानी बड़े–बड़े घेरे बनाकर इकट्ठा करें और वर्षा समाप्ति के पश्चात् आवश्यकता पड़ने पर इस पानी का प्रयोग करें, तो बाढ़ और अकाल की समस्याओं से निपटा जा सकता है, किन्तु इन जलाशयों का निर्माण कोई एक राज्य नहीं कर सकता। साथ ही यह कार्य बिना भारतीय सहयोग के भी नहीं हो सकता। स्पष्ट है कि क्षेत्रीय सहयोग में भारत के सहयोग का विशेष महत्व है। भारत के सहयोग के अभाव में भारत की अपेक्षा अन्य राज्यों को ही अधिक नुकसान पहुँचेगा। साथ ही भारत के लिए भी किसी कार्य की सफलता के लिए विशाल सहयोग का मिलान आवश्यक है। क्षेत्रीय सहयोग एवं विकास में भारत को ऐसी भूमिका निभानी चाहिए, जिससे कि सदस्य राज्यों को ऐसा न लगे कि भारत उन पर आधिपत्य जमाना चाहता है। यह भी सत्य है कि यदि भारत 'सार्क' से अपना सम्बन्ध तोड़ दे, तो सार्क की शक्ति भी धीरे–धीरे कम होगी और वह पतन की ओर अग्रसर होगा। सार्क में भारत के महत्व को इसी से आंका जा सकता है कि वह विश्व के प्रथम दस औद्योगिक देशों में एक माना जाता है।[10]

निष्कर्ष– अतः कहा जा सकता है कि 'सार्क' के विकास में अपनी भूमिका का निर्वाह करते हुए भारत को यह ध्यान रखना चाहिए कि कमजोर राज्यों का शोषण न होने पाये, उन्हें यह महसूस होना चाहिए कि वे स्वतन्त्र रहते हुए भी एक बड़े राष्ट्र की सहायता बिना किसी भय के प्राप्त कर सकते हैं। भारत का ऐसा व्यवहार ही एक आदर्श व्यवहार होगा, क्योंकि सार्क के सभी सदस्य राज्य प्रभुत्व सम्पन्न और अपनी स्वतन्त्र नीति के संचालन के अधिकारी हैं। अतः कहा जा सकता है कि 'सार्क' के सभी सदस्य देशों के बीच "युद्ध नहीं" का एक

समझौता होना चाहिए, जिससे कि कोई विदेशी शक्ति दक्षिण एशिया में किसी सैनिक अड्डे की सुविधा न प्राप्त कर सके। साथ ही यदि किसी सदस्य राज्य पर बाहरी आक्रमण होता है तो उसे पूरे 'सार्क' पर आक्रमण माना जाये, और सभी सदस्य राज्य उसका मिलकर सामना करें। इस प्रकार के सहयोग से सैनिक खर्च में काफी कमी की जा सकती है, और बचे हुए धन को 'सार्क' के विकास में लगाया जा सकता है। सार्क देशों के सामने यह एक अच्छा उदाहरण है कि जब विश्व की महाशक्तियों के बीच शीत युद्ध समाप्त हो सकता है और परस्पर बातचीत से कठोर नीतियों में परिवर्तन लाकर तथा शस्त्रास्त्रों के उत्पादन में कमी करके युद्ध की सम्भावना को टाला जा सकता है, तो दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग के सदस्य राज्यों के द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय मामले क्यों नहीं सुलझाये जा सकते। ध्यान यह रखना होगा कि क्षेत्रीय समस्याओं के समाधान में बाहरी शक्तियों का हस्तक्षेप न होने पाये और इस कार्य में भारत को बड़ी सावधानी पूर्वक आगे आना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. वी.के. अरोड़ा : प्रोसपैक्ट ऑफ कारपोरेशन, इण्डिया क्वार्टरली, न्यू देहली, वॉल्यूम–42, पृ. 69
2. यू.आर.घई : इन्टरनेशनल पॉलिटिक्स (थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस, न्यू एकेडमिक हाउस, जालंधर–2004, पृ. 113
3. अंशुमान गुप्ता : सार्क साप्टा टू साप्टा, शिप्रा पब्लिकेशन, न्यू देहली, 2002, पृ. 230
4. श्रीधर खत्री : दक्षिण एशिया में आंतकवाद एवं प्रभाव, शिप्रा पब्लिकेशन, न्यू देहली, 2003, पृ. 354
5. प्रशान्त अग्रवाल : साउथ एशिया पीस सिक्योरिटी एण्ड डवलपमेंट, किलासों बुक्स, न्यू देहली, 2006, पृ. 133
6. रनजीत कुमार : साउथ एशियन यूनियन प्रोब्लमस एण्ड प्रोसपेक्ट, मानस पब्लिकेशन, न्यू देहली, 2005, पृ. 132
7. एशियन डवलपमेंट बैंक रिपोर्ट, 2010, पृ. 75–80
8. दा हिन्दु 9 दिसम्बर 2008
9. राजस्थान पत्रिका, 29 नवम्बर 2020
10. इण्डिया टुडे, जनवरी 2021, पृ. 11–12

RRIJM 2015, All Rights Reserved